" मैं–मेरा : दु:ख का कारण / तू–तेरा : मोक्ष का साधन "

ये उद्गार परम सन्त शिरोमणि स्वामी सत्यानन्द जी महाराज द्वारा स्थापित आध्यात्मिक संस्था '***श्रीरामशरणम्***' नई दिल्ली के आध्यात्मिक उत्तराधिकारी डॉ. विश्वामित्र जी महाराज ने सैक्टर –29–सी, चंडीगढ़ में स्थित '***श्रीरामशरणम्***' में कुछ दिन पहले आयोजित हुए अमृतवाणी संकीर्तन के पश्चात् प्रवचन देते हुए प्रकट किये :

डॉ. विश्वामित्र जी जो ऑल इंडिया मेडिकल संस्थान (AIIMS) नई दिल्ली में 22 वर्षों तक आईस्पेशलिस्ट रहे और एशिया के अकेले आक्यूलर माइक्रोबायोलोजिस्ट के रूप में विख्यात हुए।

आप सन् 1993 से स्वामी सत्यनन्द जी की पावन पीठ के आध्यात्मिक अधिकारी बने और रामनाम को जीवन का एक मात्र उद्देश्य समझा और स्थापित आदर्श परम्पराओं का दृढ़तापूर्वक निर्वहन करते हुए अपने तेजोमयी प्रभामण्डल से समूचे भारत एवं विश्व को प्रकाशमय कर रहे हैं।

आज के इस भौतिक युग में मानसिक असन्तोष, तनाव एवं एक दूसरे से आगे बढ़ने की भाग– दौड़ से मानवीय समाज में एक–तरह से उथल–पुथल मची हुई है। सेवा, त्याग, समर्पण, परमार्थ, अनुशासन, पारस्परिक प्रेम आदि आधारमूल मानवीय गुण लुप्त होते जा रहे हैं।

प्रवचन देते हुए श्री विश्वामित्र जी महाराज ने श्रीरामकृष्ण परम्हंस जी का उल्लेख किया जिनसे किसी ने ये पूछा की मानव जीवन कब सार्थक होता है, क्या बेशुमार धन दौलत आ जाने से, समाज में ऊँचा पद् प्राप्त करने से या अपने कार्यक्षेत्र में सबसे उत्तम पदवी प्राप्त करने से इत्यादि।

श्री परम्हंस जी ने मुस्कुराकर उत्तर दिया कि सांसरिक उपलब्धियां जितनी भी हों वो तो एक ज़ीरों के बाद दूसरे ज़ीरों को लगाने जैसा है जिनका अपने आप में कोई मूल्य नहीं है। ज़ीरों का मूल्य तभी होता है जब ज़ीरो से पहले एक का क्रमांक लगे तो फिर 10 बनता हैं 100, 1000, या एक लाख बनता है।

एक का क्रमांक बस वही सर्वशक्तिमान परमेश्वर ही है। जो भी इन्सान बिना किसी झिझक और श्रद्धा से पूर्णतया समर्पित हो जाए तो उस का जीवन ही सार्थक समझा जायेगा। नि:संदेह मानव अपनी जीवन रेखा की लम्बाई यानी आयु के बारे में शायद कुछ नहीं कर सकता लेकिन अपनी जीवन शैली में उचित उद्देश्य, संवेदनशीलता एवं सार तो लाया जा सकता है जिसको अपने अन्दर उतारने का सरलतम उपाय परमेश्वर से आत्मिक प्रेम यानि परिवार, समाज व हर प्राणी से अनासक्त प्रेम करना ही है।

जीवन का लक्ष्य तो परम् आनन्द एवं शान्ति की प्राप्ति है जो वाह्यमुखी होकर प्राप्त नहीं होती। इसलिए कहा गया है ***'सधा मन सम्पदा, बिगड़ा मन विपदा'।***

स्वामी सत्यानन्द जी द्वारा रचित श्री अमृतवाणी जोकि स्वामी जी का अवतरित लघु ग्रन्थ है में अंकित है ***'घट में नाम मूर्ति धरिये, पूजा अन्तर्मुख हो करिये'*** । जैसे पानी को नीचे से ऊपर पहुँचाने के लिए मोटर यानी यंत्र

की जरूरत पड़ती हैं बिल्कुल इसी तरह पूरे समर्पित भाव चाव से परमपुरूष श्री रामनाम का जाप ही वह अमोघ मंत्र है जो साधक की आध्यात्मिक यात्रा में पैदा होने वाली सभी रूकावटों व बाधाओं को दूर करने वाला ब्रह्मस्त्र है। सांसारिक दौड़ में तमाम सुख सुविधाओं का औरों से ज्यादा संग्रह करने की होड़ में पीछे न रह जायें, बेटी की शादी, बेटे के घर पुत्र की प्राप्ति इत्यादि इच्छाओं की पूर्ति न होने का कारण कोई ग्रह दोष बताता है, कोई वास्तु शास्त्र का दोष बताता हैं जिसे सब दूर करवाने में लगे रहते है। पर दुःख, पीड़ा, कष्ट फिर भी दूर नहीं होते, हम ये क्यों भूल जाते है कि सबसे बड़े दोष तो प्रारब्ध दोष हैं जो हमारे पूर्व जन्मों के संचित कर्मो का फल होता है जिसे हर हालत में भुगतना ही पड़ता है।

श्री अमृतवाणी में अंकित है ***(जपते राम नाम जप पाठ–जलते कर्म बन्ध यथा काठ)***। हमारे मन में सदैव एक तरह का द्वन्द युद्ध चलता रहता है जिसमें एक तरफ मन है तो दूसरी ओर बुद्धि व विवेक होते हैं। मन अपने चंचल स्वभाव के कारण हमें मोह जाल में जकड़ के रखता है, जिस भी तरफ मन भागता है हम भागते रहते हैं, उसकी अनाप–शनाप मांगों को पूरा करते हैं जिस से मन बलवान हो जाता है। और जब भी कभी बुद्धि हमें विवेकशील व नेक सलाह देती है कि मन का कहना नहीं मानना तो बलवान मन बुद्धि को पटखनी दे देता है और हम फिर से पूरी तरह मन के वशीभूत हो जाते हैं और सारा जीवन अशान्त, भयग्रस्त और नाकारात्मक होकर और परमेश्वर को कोसते हुए बिता देते हैं। जब तक जीवन है तब तक तकलीफों का आना स्वाभाविक है और अध्यात्म में एक और भी कटु सत्य है कि परमेश्वर सर्वशक्तिमान होते हुए भी हमारे कष्ट दूर नहीं कर सकता परन्तु उस के नाम का सिमरन एक अमोघ मन्त्र है इसीलिए सत्य ही कहा है ***' राम से बड़ा राम का नाम '*** जिससे मन विचलित नहीं होता, इन्सान समभाव में रहता हुआ रामनाम के जाप पाठ से जीवन में अंहकार, ईष्या आदि दोष जो ***'मैं और मेरा'*** सोचने से उत्पन्न होते हैं उनसे मुक्ति मिलती है, और **'तू और तेरा'** अन्तर्मन से सोचते हुए पूर्णतया समर्पण भाव से सब कुछ परमेश्वर को सौंप कर जीने का प्रयास करने से जीवन सचमुच राममय हो जायेगा, कष्ट कष्टदायक नहीं रहेंगे और हमारा अन्तर्मन उत्साह से और व्यक्तित्व साकारात्मक और आशामय तरंगों से भरा होगा।